

❖ सद्वाक्य ❖

१. शांतिकुंज एक क्रान्तिकारी विश्व-विद्यालय है। यहाँ अनौचित्य की नींव हिला देने वाले बंकिम बाबू के आनंद मठ उपन्यास की मूर्तिमान संरचना खड़ी की जा रही हैं।
२. अपने दोषों की ओर से अनभिज्ञ रहने से बड़ा प्रमाद इस संसार में और कोई नहीं हो सकता।
३. पात्रता विकास के बिना न संसार में कोई रिश्ता है और न इसके बिना अध्यात्म क्षेत्र में कोई रास्ता है।
४. जिस प्रकार शरीर की आवारागर्दी अपराध है, वैसे ही विश्वास की अस्थिरता मानसिक जुर्म है।
५. किसी का भी अमंगल चाहने पर स्वयं पहले अपना अमंगल होता है।
६. नियतिगत या स्वभाविक मृत्यु की अपेक्षा किसी सिद्धान्त के लिये – आदर्श के लिये मरना अधिक स्तुत्य है।
७. आदर्शों को जीवन मूल्य कहा गया है अर्थात् – जीवन का मूल्य देकर भी जिन पर दृढ़ रहा जाना चाहिए।
८. सफलता का सबसे पहला रहस्य है – हर परिस्थिति के लिये तैयार रहना।
९. किसने कितनी उन्नति की इसकी सच्ची कसौटी यह है कि एस मनुष्य के दृष्टिकोण और स्वभाव का कितना परिष्कार हुआ।
१०. अध्यात्म का पहला शिक्षण यही है कि मनुष्य अपने को समझे, यह सोचे कि मैं कौन हूँ क्या बना हूँ।
११. माया का अर्थ है – वह अज्ञान जिससे ग्रस्त होकर मनुष्य अपने को निर्दोष और सारी परिस्थितियों के लिये दूसरों को उत्तरदायी मानता है।
१२. सम्पन्नता का सुख केवल उन्हें ही मिलता है, जिनने अपना आंतीक पीछकार कर लिया होता है।
१३. सद्गुण तो वह जादू है, जिसकी प्रशंसा शत्रु को भी करनी पड़ती है।
१४. मुक्ति का अर्थ है – वासनाओं और तृष्णाओं के बंधनों से जिंदगी जीने की प्रकाश – प्रेरण का नाम ही अध्यात्म है।
१५. जिवन की दशा ठीक कर देने और परिष्कृत दृष्टिकोण से जिंदगी जीने की प्रकाश-प्रेरणा का नाम ही अध्यात्म है।
१६. शरीर को अपनी संपत्ति मानकर भोग विलासों से लगाये रहना अहंकार है।
१७. विद्या रहित शक्ति मनुष्य को आततायी, अन्यायी और अत्याचारी बना देती है।
१८. अव्यवस्थित जीवन, जीवन का ऐसा दुरुपयोग है जो विभूतियों के स्थान पर दरिद्रता की वृद्धि कर देता है।
१९. आलस्य और प्रमाद ही असफलता के जनक है।
२०. अध्यात्म का मूल मंत्र प्रेम है।
२१. सच्चाई, ईमानदारी, सज्जनता, सौजन्य आदि गुणों के बिना कोई भी मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता।
२२. भगवान को घट-घट वासी और न्यायकारी मानकर पापों से हर घड़ी बचते रहना ही सच्ची भक्ति है।

२३. अपने गुण ,कर्म, स्वभाव का शोधन और जीवन-विकास के उच्च गुणों का अभ्यास करना ही साधना है ।
२४. सच्चरित्रता, सदाचार ,संयम, परमार्थ आदि गुणों पर आधार रखने वाला अध्यात्म ही सच्चा अध्यात्म है ।
२५. सद्भावनाओं और सम्प्रवृत्तियों से जिसका जीवन जितना ओतप्रोत है, उसे उतना ही ईश्वर के निकट समझना चाहिए ।
२६. आर्थिक क्षेत्र के आध्यात्मिक सिद्धांत हैं - मितव्ययिता, संतोष, निरालस्य और ईमानदारी ।
२७. यह भूल जाइये कि वास्तविक सुख - शांति का निवास भौतिक सधनों की प्रचुरता में हैं- किन्तु यह याद रखिये कि उसका निवास मानसिक उत्कर्ष में ही है ।
२८. सच्ची आस्तिकता की पहचान गुण - अवगुण ही है । ईश्वर के अस्तित्व में हाँ अथवा ना नहीं ।
२९. पूर्ण भौतिकवादी होने का सबसे बड़ा दण्ड यह है कि ईश्वर के प्रति मनुष्य की आस्था शिथिल हो ही जाती है ।
३०. विवेक की परख कुमार्ग से बचने में है ।
३१. आपके साथ ईश्वर है, यह मानकर कोई भी व्यक्ति हर घड़ी निर्भय रह सकता है ।
३२. उत्थान का आधार है- सही दिशा निर्धारण और सज्जनता का आचरण ।
३३. सिद्धान्तों के प्रति, अपनी दिव्यताओं के प्रति अनास्था मनुष्य को एकांगी, स्वार्थी एवं अहंकारी बनाती है ।
३४. उठने और गिरने के दोनों मार्ग हर किसी के लिये खुले पड़े हैं । इनमें से कोई किसी किसी का भी स्वेच्छा पूर्वक वरण कर सकता है ।
३५. यदि धन के लिये परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है तो भी स्वास्थ्य के लिये परिश्रम किया जाय ।
३६. समाज दुर्गुणी व व्यसनों लोगों के दुर्गुणों - व्यसनों को उपहासास्पद नहीं मानता, जितना सद्गुणी से दीखने वाले व्यक्तियों दुर्गुणी व्यवहार को देखकर ।
३७. दुष्टता या अवांछनीयता का दमन - प्रतिरोध किसी भी प्रकार किया जाए ऐसा मनुष्य अहिंसा के अंतर्गत ही आता है ।
३८. अपने आप को सुविकसित ,समुन्नत एवं सुसंस्कृत बन लेना ही देव - आराधना का एक मात्र उद्देश्य है ।
३९. वास्तव में स्वर्ग आत्म - संतोष को कहते हैं। क्योंकि संसार में वही सबसे अधिक शांतिदायक स्थिति है ।
४०. आंतरिक दुर्बलता सबसे बड़ी दुर्बलता है । वह मनुष्य को ऐसा अपंग और निःस्वत्व बनाकर छोड़ती है कि कोई महत्वपूर्ण काम कर सकना उसके लिये संभव ही नहीं रहता ।
४१. आन्तरिक दरिद्रता ही बाहर की दरिद्रता बनकर प्रकट होती रहती है ।
४२. हम कोई ऐसा काम न करें , जिसमें अपनी अन्तरात्मा ही अपने को धिक्कारे ।
४३. आत्म दण्ड से पीड़ित व्यति प्रचुर साधन सम्पन्न होते हुए भी निरन्तर व्याकुल, बेचैन रहता है ।
४४. देश की आन, बान और शान पर सब कुछ निछावर करने वाले स्वाभिमानी सेनानायकों से कम नहीं वरन् बढ़कर है आत्मवादी

४५. आत्म गौरव की मांग है कि शानदार जीवन जीया जाए , शान-दार सोचा और शान-दार किया जाए ।
४६. आत्मवादी न दुस्त हो सकता है, न कुकर्मी, न छल कर सकता है और न प्रपंच रच सकता है ।
४७. लोकमंग के लिये किये गये प्रयास भगवान की सर्वोत्तम पूजा है ।
४८. ईश्वरीय प्यार को प्राप्त करने के लिये अपना आंतरिक स्तर परिष्कृत करना ही सर्वश्रेष्ठ तप साधना है ।
४९. अपनी आस्थाओं को दूसरों के कहे-सुने अनुसार नहीं, वरन् स्वतंत्र चिंतन के आधार पर विकसित करें ।
५०. ईमानदारी और प्रामाणिकता ही किसी व्यक्ति का वजन बढ़ाती है ।
५१. सज्जन होना उचित है, पर मूर्ख होना अक्षम्य है ।
५२. हमें किसी के साथ अनीति नहीं बरतना चाहिये, पर अन्याय को भी सहन नहीं करना चाहिए ।
५३. जिसे हम बुरा समझते हैं, ऐसे स्वीकार न करना सत्याग्रह है और यह किसी भी प्रियजन, संबंधी या बुजुर्ग के साथ किया जा सकता है ।
५४. इन्कार, असहयोग, विरोध और संघर्ष इन चार शस्त्रों से अनीति और अविवेक का सामना हमें करते रहना चाहिए ।
५५. कुमार्ग पर चलकर पाई हुई सफलता की अपेक्षा सन्मार्ग पर चलते हुये मिली असफलता ही सराहनीय है ।
५६. कर्मफल एक ऐसा अमिट तथ्य है जो आज नहीं तो कल भुगतना ही पड़ेगा ।
५७. मानवी गरिमा का तकाजा है कि हग न्याय, औचित्य और कर्तव्य को अपनायें ।
५८. निकृष्ट चिंतन एवं घृणित कर्तव्य हमारी गौरव गरिमा पर लगा हुआ कंकल है जिसे अविलंब निरस्त किया जाना चाहिए ।
५९. आत्म धिक्कार, आत्म प्रताड़ना , आत्म असंतोष , आत्म विद्रोह मानवी चेतना की मिलने वाला सबसे बड़ा दण्ड है ।
६०. हममें से प्रत्येक को आत्म गौरव की ,आत्म सम्मान की, आत्म परिष्कार की, आत्म साक्षात्कार की चेष्टा करनी चाहिए ।
६१. पाप और बुराइयों के सामने सिर झुका देने उनका प्रतिरोध न करने से तो वे दिन दूने और रात चौगुने बढ़ते हैं ।
६२. उठो ,जागो और अच्छे कर्म करने में लग जाओ ।मन को सर्वदा दृढ़ रखो,इसी से कल्याण होगा ।
६३. धर्म और न्याय की रक्षा के लिये संघर्ष करना धर्म का प्रधान चिन्ह ।
६४. आत्मा की पुकार सबसे बड़ी है उसे किसी भी कारण ठुकराया नहीं जा सकता ।
६५. बालक के द्वारा कही हुई युक्ति संगत बात को मान लेना चाहिए ।
६६. अनचार का प्रतिरोधकरना मनुष्य का अत्यंत पवित्र धर्मयुक्त कर्तव्य है ।
६७. अन्याय का सहन करना, पाप से सहयोग करने एवं उसे बढ़ावा देने के समान है ।
६८. निराशा के समान मनुष्य के लिये कोई पाप नहीं है ।
६९. आशा सर्वोत्तम प्रकाश निराशा घोर अंधकार है ।

७०. सद्गुरु किसी व्यक्ति विशेष को नहीं मनुष्य के गुणग्राही दृष्टिकोण को कहते हैं ।
७१. जाति या वंश के आधार पर किसी को अपने से छोटा या नीचा मानना भगवान के आदेशों एवं धर्म तथा अध्यात्म के सिद्धांतों से सर्वथा विपरीत है ।
७२. अपना उद्धार करना संसार का उद्धार करने का प्रथम चरण है ।
७३. क्रोध मनुष्य को आक्रमण करने का अवसर उसी पर मिलता हो जो स्वयं क्रोधी हो ।
७४. आत्म कल्याण की पहली सीढ़ी आत्म निरीक्षण और दूसरी आत्म सुधार है ।
७५. आत्म निरीक्षण करती अपनी बुराइयें ढूँढ़ सकना और उन्हें सुधारने के लिये तत्पर हो सकना बड़ी बहादुरी और दूरदर्शिता का काम है ।
७६. हम अपने उद्धार के लिये -उत्थान के लिये कटिबद्ध होंगे तो सारा संसार हममारी सहायता करेगा ।
७७. अकर्मण्य व्यक्ति भाग्य को दोष देकर रोते खीझते जिंदगी पूरा करते हैं ।
७८. दूसरों की सहायता की आशा पर आत्मरक्षा के लिये हमें बैठे न रहना चाहिए वरन् अपना बचाव आप करना चाहिए ।
७९. लक्ष्य के अतिरिक्त कुछ दिखाई न दे उसी की साधना सफल होती है ।
८०. दूसरों के सम्मान और स्वाभिमान की रक्षा करने वालों का सम्मान ईश्वर बनाये रखता है ।
८१. यदि मनुष्य अपनी आत्मा के सामने सच्चा है तो उसे सारी दुनियाँ की परवाह नहीं करनी चाहिए ।
८२. मनुष्य की उन्नति दूसरे के पर अवलम्बित नहीं है, इसके लिये उसे स्वयं अपने ही पैरों पर खड़ा होना जरूरी है ।
८३. सत्य के समर्थन में मनुष्य को दृढ़ता और धैर्य से काम लेना चाहिए ।
८४. संसार में कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जो सत्य संकल्प की शक्ति के अधार पर पूर्ण न हो सके ।
८५. सूर्य के श्रम को देखो जो सदा चलता रहता है और कभी आलस्य नहीं करता, इसलिये बराबर श्रम करते रहो ।
८६. पूर्व जन्म में किये हुए काम ही को प्रारब्ध कहते हैं इसलिये मनुष्य को आलस्य छोड़कर पुरुषार्थ करना चाहिए ।
८७. डरपोक और शाक्तिहीन मनुष्य भाग्य के पिछे चलता है ।
८८. जो मनुष्य संसार में उत्साही है, उसके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है ।
८९. अपने समान सबको समझने की मान्यता में अध्यात्मवाद का सारा तत्त्वज्ञान सन्निहित है ।
९०. सम्मान, प्रसन्नता एवं सहयोग का सुख भी उसी को मिलता है, जो दूसरों की सद्भावना प्राप्त कर सके ।
९१. दूसरों के सहयोग की उपेक्षा करके कोई व्यक्ति प्रगतिशील, शुखी सुग्री-समृद्ध होना तो दूर, ठीक तरह जिंदगी के दिन भी नहीं गुजार सकता ।
९२. दुष्टता और सज्जनता के आधार पर किसी को नीच-ऊँच माना जाय न कि जाति-पाँति के आधार पर॥
९३. दूसरों की परिस्थिति में हम अपने को रखें, अपनी परिस्थिति में दूसरे की रखें और फिर विचार करें

कि इस स्थिति में क्या सोचना और करना उचित है ?

९४. दूसरों के दुःख में अपना दुःख अनुभव करना और दुखी होना आध्यात्मिकता का चिह्न है।
९५. वासना के लिये नहीं मानवीय कर्तव्यों के लिये किसी को प्यार करना यही प्यार का सच्चा स्वरूप है।
९६. जीत उसी को होती है जो सत्य और न्याय का समर्थक होता है।
९७. मानवता की सेवा से बढ़कर और कोई काम बड़ा नहीं हो सकता।
९८. अपने को सबमें और सबको अपने में अनुभव करने वाला व्यक्ति वस्तुतः हर घड़ी ईश्वर को ही देखता है।
९९. दुष्टों को उसकी दुष्टता का दंड मिले ताकि वे भविष्य में वैसा दुष्कर्म करने का साहस न करें।
१००. अध्यात्म की प्रथम कसौटी धैर्य और श्रद्धा ही है।
१०१. ज्ञान की सार्थकता तभी है जब वह कर्म रूप में परिणत हो सके।
१०२. सुदृढ़ स्वास्थ्य ही वह नींव है, जिसके ऊपर सुदृढ़ राष्ट्र खड़ा हो सकता है।
१०३. वास्तव में मनुष्य होकर भी उच्च विचार रखना अपने को योग्य बनाना और सत्कर्म करना बड़े भाग्य की बात है।
१०४. जो व्यक्ति अपने जीवन में शुभ कर्म द्वारा सार्थक नहीं बनाता उसका जन्म लेना व्यर्थ है।
१०५. मूर्ख व्यक्ति रुख और आराम की कल्पना करके आलस्य को अपनाता है।
१०६. हम अपनी आवश्यकताओं को उतना ही रखें जितनी जीवन को पवित्रता तथा श्रेष्ठता के साथ व्यतीत करने के लिये अनिवार्य है।
१०७. अकर्मण्य जीवन बहुत बड़ा अभिशाप है।
१०८. अगर नर-नारी को स्वयं नहीं उठाते तो नारी स्वयं उठ खड़ी हो, जौसे मीरा स्वयं उठ खड़ी हुई थी।
१०९. राजनीति से हमारा कोई संगंध नहीं, किन्तु भ्रष्ट राजनीति और राजनेता को ठीक करने का सामर्थ्य वशिष्ठ-विश्वामित्र की तरह है जो हम अगले दिनों करेंगे।
११०. भौतिक महत्वाकांक्षाएँ अगर आपके दिमाग पर हावी रही तो हमको कहना पड़ेगा के आपत् कालीन युग में आप कुछ नहीं कर पायेंगे।
१११. हर बुरा आदमी भी सुधार प्रक्रिया को अपनाकर प्रमाणिक ही नहीं श्रद्धास्पद भी बन सकता है।
११२. जिन नई प्रतिज्ञायें करने और जोश ठंडा होते ही गिरगिट की तरह कुछ से कुछ बन जोने वाले लोग अपनी हंसी कराते और अवश्वास की वातावरण बनाते हैं।
११३. कोई विचारशील व्यक्ति यदि अपने पिडड़े और बिगड़े समाज को सुधारने के लिये प्रयत्न नहीं करता तो उसकी उपेक्षा भी एक दण्डनीय अपराध है।
११४. स्वयं उन्नति करना-सदाचारी होना काफी नहीं, दूसरों को भी ऐसी ही सुविधा मिले, इसके लिये प्रयत्नशील रहना आवश्यक है।
११५. जाति वंश के नाम पर ऊँच-नीच की भावना सर्वथा अनैतिक एवं अवांछनीय है।
११६. यह कलंक हम सभ्याभिमानियों पर बुरी तरह लगा हुआ है कि हर बात तो न्याय की, नीति समता

की करते हैं पर बर्ताव बिलकुल उलटा करते हैं।

११७. जिनके भीतर जितनी ईश्वरीय प्रयोजनों में सहयोगी बनने की तड़फ़न है, वह उतना ही दिव्य आत्मा है।
११८. अपनी सभी इच्छायें समाप्त करके गुरु को संतोष देने वाला कष्ट साध्य कार्य में प्रवृत्त होना ही सच्ची गुरु भक्ति और गुरु दक्षिणा है।
११९. भक्त की इच्छायें भगवान पूरी नीरं करते, वरन् भगवान की इच्छा पूरी करने के लिये भक्त को आत्म समर्पण करना पड़ता है।
१२०. समस्त संसार के मूर्धन्य, शक्तिवानों, विचारवानों की आशंका एक ही है कि विनाश होने जा रहा है, पर हमारा अकेले का कथन यह है कि अलटे को उलटकर ही सीधा किया जायेगा।
१२१. सच्चई के समर्थक एक ही बात जानते हैं कि जो अपने पास है उसे लेकर आगे बढ़ना और निष्ठापूर्वक सतत संघर्ष में अपनी अंतिम बूँद समर्पित कर देना।
१२२. दूसरों को कुछ सिखाना हो तो उसका एक मात्र तरीका अपना उदाहरण प्रस्तुत करना है।
१२३. समय की बर्बादी एक प्रकार की मंद आत्महत्या है।
१२४. कर्मयोग की साधना के लिए अच्छा मंत्र है—हर दिन नया जन्म और हर रात नई मौत।
१२५. सामान्य कामकाज में उत्कृष्टता का दृष्टिकोण रखना ही कर्मयोग है।
१२६. स्वाध्याय में प्रमाद न करने की शास्त्राज्ञा को एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति की तरह शिरोधार्य करना चाहिए।
१२७. सोचते बहुत हैं, चाहते हैं, पर कर कुछ भी नहीं पाते, यह दुर्बलता ही अध्यात्म में सबसे बड़ी बाधा है।
१२८. बकवारों से नहीं, कार्यों से ही किसी की महानता परखी जा सकती है।
१२९. कोई आदर्शवादी धर्म-अध्यात्म की बात तो बहुत करें पर परीक्षा का समय आने पर इधर-दधर छिपे रहे तो उसकी आस्था संदिग्ध मानी जायेगी।
१३०. ईश्वर और धर्म की मान्यतायें इसलिये हैं कि इन आस्थाओं को हृदयंगम करने वाला व्यक्ति निजी जीवन में सदाचारी और सामाजिक जीवन में परमार्थी बने।
१३१. भौतिक उन्नति के बड़े-बड़े प्रयत्न जब तक नगण्य ही माने जाते रहेंगे, तब तक उनकी अपेक्षा अनेक गुना प्रयास आंतरिक निकास के लिये न किया जाय।
१३२. जो धर्म की रक्षा करता है उनकी रक्षा होती और जो धर्म को मारता है, धर्म उसे भी मार डालता है।
१३३. अधर्म के मार्ग पर न कोई अब तक फला फूला है और न सुख शान्ति से रहा है।
१३४. धर्मात्मा के लिये दयालु, क्षमाशील बनना ही पर्याप्त नहीं वरन् उसके लिये सद्गुणी, शिष्ट, ईमानदार कर्तव्य परायण, साहसी, विवेकशील, अनीति के विरुद्ध लोहा लेने का शैर्य एवं कठोर श्रम करने का उत्साह भी अनिवार्य है।
१३५. धर्म का बखान ही नहीं होते रहना चाहिए उसे कर्म में भी स्थान मिलना चाहिए।
१३६. मुक्त के उत्तराधिकार से मिली दौलत से नहीं, संस्कार और सद्गुणों की संपत्ति ये ही संतान का भला होता है।
१३७. हमें अच्छा, नेक और सशक्त मनुष्य बनना चाहिए। मूफ़्त के उत्तराधिकार से मिली है दौलत से

- नहीं, संस्कार और सद्गुणों की संपत्ति ये ही संतान का भला होता है।
१३८. चरित्र गठन का नाम ही धर्म और अपनी क्षमताओं लोकमंगल के लिये समर्पित करने की पृष्ठभूमि का नाम अध्यात्म है।
 १३९. शारीरिक आलस्य और मानसिक प्रमाद पिछड़ेपन की निशानी है।
 १४०. जिनकी महत्वाकांक्षा बढ़ी चढ़ी हो आड़े वक्त में उससे कोई सहायता नहीं मिल सकती।
 १४१. जमाने की चाल को देखते हुये-समय की प्रतिकूलता का दौर देखते हुये सबसे आवश्यक यह है कि महत्वाकांक्षी लोगों से सतर्क रहा जाय।
 १४२. जिन्हें मानवी गरिमा को अपनाये रहने का मन हो उनके लिये उचित यही है कि सामान्य स्तर का निर्वाह स्वीकार करे।
 १४३. हमारे परिजन अपनी क्षमताओं को अपने लिये ही खर्च करते रहने की कृपणता से छूटें।
 १४४. करना तो बड़ा काम करना, नहीं तो बैठे रहना यह दुराग्रह मूर्खतापूर्ण है।
 १४५. बड़े काम में इज्जत बढ़ती है और छोटे काम से तौहीन होती है यह सोचना हर दृष्टि से अपुण्युक्त है।
 १४६. कठिनाईयां मात्र बाधक ही नहीं होती, वे बुद्धिमत्ता की प्रसुप्त परतों को भी उजागर करती हैं।
 १४७. निराशा न किसी गिरे का ऊँचा उठने देती है और न प्रगति की किसी योजना को क्रियान्वित होने देती है।
 १४८. आस्तिकता का अर्थ है ईश्वर विश्वास और ईश्वर विश्वास का अर्थ है एक ऐसी न्यायकारी सत्ता के अस्तित्व को स्वीकार करना, जो सर्वव्यापी है और कर्मफल के अनुरूप हमें गिरने एवं उठने का अवसर प्रस्तुत करती है।
 १४९. चाहे किसी भी वंश में पैदा क्यों न हुआ हो, पर जिसमें मानवी आदर्शों की रक्षा में कुछ त्याग और वलिदान करने का शौर्य एवं साहस उठता है, वस्तुतः वही ब्राह्मण कहा जाने का अधिकारी है।
 १५०. प्रयत्न की यह असफलता स्वयं एक परिक्षा है। मनुष्य को उसे स्वीकार कर और उत्तीर्ण करना ही चाहिए।
 १५१. विपन्नता का उपचार दुःखी रहना नहीं, बल्कि उत्साह पूर्वक पुरुषार्थ करना ही है।
 १५२. ऐसे पराक्रम कर गुजरना जिससे अपनी महानता उभरती है और सभ्य समाज और संस्कृति की छवि निखरती है, बहादुरी उसी का नाम है।
 १५३. जो अपनी उन्नति और विकास का चिंतन किया करता है उसका भविष्य उज्ज्वल और भाग्य अनुकूलता पूर्वक निर्मित होता है।
 १५४. अपने आप को परिवर्तन के अनुसार बदलते न रहने की प्रतिक्रिया का नाम ही परिस्थितियाँ हैं।
 १५५. आज मनुष्य जितना अशांत और द्वंदों में फँसा हुआ है, इसका एकमात्र कारण परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको न बदलने का दोष है।
 १५६. शरीर को भोग का साधन मानना एक अकल्याणकारी दृष्टि है।
 १५७. आत्मा का स्वार्थ ही सच्चा स्वार्थ है, जिसे परमार्थ के नाम से पुकारा जाता है।

१५८. आत्म विस्वास आत्म सम्मान या स्वाभिमान की रक्षा का भाव है।
१५९. अपने पास जो शक्तियाँ हैं, उन पर विस्वास करना और उन्हें अच्छे काम में प्रयुक्त होने का अवसर देना ही आत्म विस्वास है।
१६०. भाग्यवाद एवं ईश्वर की इच्छा से सब कुछ होना है। जैसी मान्यताएँ विपत्तिमें असंतुलित न होने एवं सम्पत्ति में अहंकारी न होने की लिए एक मानसिक उपचार मात्र है।
१६१. ईश्वर के सभी पुत्र समान हैं। वह अधिक प्यार केवल अधिक संयमी, अधिक सेवाभावी को कर सकता है। वंश के आधार पर कोई उसका प्रतिनिधि नहीं हो सकता।
१६२. किसी वर्ग विशेष को दान-दक्षिणा देने और उसी को ईश्वर का प्रतिनिधि मानकर यह सोचना की उन्हें जो दिया जायगा वहीं कहलायगा एक अविवेकपूर्ण भ्रांति है।
१६३. विचार वास्तव में वही सच्चा विचार है जो किसी भी परिस्थिति में सुरक्षित बना रहे।
१६४. जिनके विचारों में उच्चता, दृढ़ता, सक्रियता होती है वे संसार में निश्चय ही श्रेष्ठ कार्य कर दिखाते हैं।
१६५. हमें चाहिए कि विचारों का व्यसन त्यागकर किसी एक महान विचार को ग्रहण कर ले फिर उसी की पूर्ति में अपना सारा जीवन लगा दे।
१६६. हमें व्यकार के बहुत से विचार त्यागकर किसी एक उद्देश्य पूर्ण विचार को निश्चित करना चाहिए।
१६७. केवल विचार जानकर ही किसी व्यक्ति को प्रमाणिक अथवा महान नहीं माना सकता।
१६८. हर किसी का उनकी योग्यता, प्रतिभा और ज्ञान ही उसका कुल और गोत्र होता है।
१६९. बड़प्पन कि इच्छा अच्छे व्यक्ति करते हैं पर जिनका दृष्टिकोण विशाल है, उन्हें महापुरुष बनने की ही आकांक्षा रहती है।
१७०. धन, बुद्धि और बल पाकर लोक में बड़े आदमी बन सकते हैं, पर महापुरुष बनने का श्रेय केवल आत्मबल सम्पन्न को मिलता है।
१७१. पुरुष को पुरुषोत्तम, आत्मा को परमात्मा, नर को नारायण, लघु को महान बनाने की विद्या का नाम अध्यात्म है।
१७२. जीवन के उतने अंश को ही सदुपयुक्त कहा जायगा, जो भौतिक तृष्णाओं तथा इंद्रिय तृप्ति के प्रयत्नों से बचाकर परमार्थ तथा अध्यात्म की दिशा में लगाया जायगा।
१७३. अध्यात्म का वास्तविक उद्देश्य मानव जीवन का सर्वांगीण विकास है।
१७४. भजन-पूजन आध्यात्मिक उन्नति की ओर बढ़ने के लिये एक उपाय है, स्वयं में यह अध्यात्म नहीं।
१७५. जो व्यक्ति पूजापाठ करता है उसके माध्यम से परमात्मा से संपर्क बढ़ता है वह उस उच्चदर्श के कारण बाध्य है कि अपनी बुराइयाँ दूर करें और गुण ग्रहण करें।
१७६. हृदय में ईर्ष्या का भाव पाल लेने का अर्थ है, अच्छे खासे जीवन में आग लगा लेना।
१७७. वर्तमान पुण्य अथवा पापों का फल वर्तमान में ही मिल जाए, यह आवश्यक नहीं तो कभी भी समयानुसार परिपाक में आकर प्रकट हो सकते हैं।

१७८. उपासक का कर्तव्य है कि वह भजन पूजन तो करें ही साथ ही मानसिक मलों और शारीरिक दुष्टताओं का भी परिशोधन करता चले।
१७९. भजन पूजन तब तक अधूरी और एंकाकी है, जब तक आत्म विकास और आत्म सुधार की प्रक्रिया भी इसमें नहीं जोड़ दी जाती।
१८०. संसार में पराश्रय सदैव दुःख देता है।
१८१. खिन्नता, कायर और कमजोर मन वालों का दण्ड है।
१८२. अपने पैरों पर खड़े होने का भरोसा ही सच्ची शक्ति है, उसी से मनुष्य सांसारिक अपमान से अपनी सुरक्षा कर सकता है।
१८३. अपने श्रम और अध्यवसाय के पर विश्वास करना मानवीय महानता का श्रेष्ठ सोपान है।
१८४. दूसरों का सहारा ताकते रहने से कोई महत्वपूर्ण सफलता नहीं पाई जा सकती।
१८५. ईश्वरीय आस्था का तात्पर्य है किसी भी परिस्थिति में मुस्करा सकने और खिलाड़ी की भावना से हानि-लाभ से संतुष्ट रहने की क्षमता।
१८६. हमें धर्म की रक्षा के लिये कटिबद्ध होना चाहिए ताकि धर्म हमारी रक्षा करने में समर्थ हो सके।
१८७. श्रेष्ठता का मार्ग वह है जिस पर खुद चलकर ही किसी को चलने की प्रेरणा दी जा सकती है।
१८८. शरीर की शक्ति तो कभी भी पराजित हो सकती है, पर मन की शक्ति को कभी पराजय का मुँह नहीं देखना पड़ता।
१८९. मनुष्य की संकल्प शक्ति संसार का सबसे बड़ा चमत्कार है। उसके आधार पर छोटे स्तर पर खड़ा हुआ व्यक्ति ऊँचे से ऊँचे स्थान तक पहुँच सकता है, असफलता यही उपदेश देने आती है कि लक्ष्य तक पहुँचने के लिये अधिक हिम्मत, अधिक बहादुरी और अधिक निष्ठा की जरूरत थी।
१९०. हृदय, धड़कने वाली रक्त की थैली का नहीं, अंतःकरण को अध्यात्म की भाषा में हृदय कहा गया है।
१९१. उत्कृष्टता के प्रति श्रद्धा और आदर्शों के प्रति निष्ठा का उद्गम स्थान हृदय है।
१९२. अध्यात्म एक क्रमबद्ध विज्ञान है। जिसका सहारा लेकर कोई भी व्यक्ति उसी तरह लाभान्वित हो सकता है जिस तरह कि बिजली, भाप, आग आदि की शक्तियों का विधिवत् प्रयोग करके अभीष्ट प्रयोजन पूरा किया जाता है।
१९३. जो जीवनोद्देश्य की पूर्ति और ईश्वर की आज्ञापालन करने में बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान प्रस्तुत कर सके वह सच्चे अर्थों में प्राणवान है।
१९४. वे मनुष्य धन्य हैं जो धर्म को किसी भी भाव नहीं बेचते।
१९५. पापी को भी प्यार किया जा सकता है, पर पाप के प्रति तो निष्ठुरता बरतनी ही पड़ेगी।
१९६. संकल्प, जीवन की उत्कृष्टता का मंत्र है। उसका प्रयोग मनुष्य जीवन के गुण विकास के लिये होना चाहिए।
१९७. दरिद्रता कोई दैवी प्रकोप नहीं है। उसे आलस्य, प्रमाद, अपव्यय एवं दुर्गुणों के एकत्रीकरण का प्रतिफल ही कहना चाहिए।

१९९. सबसे बुरे किस्म के और सबसे बड़े पाप दो ही हैं, जिनमें से एक है आलस्य, दूसरा है अहंकार।
२००. समग्र धर्म की धारणा-आत्म संयम, उज्ज्वल भविष्य, चरित्र, उदारता, ज्वलंत देश भक्ति एवं लोकसेवा की तत्परता में ही संभव है।
२०१. कर्तव्य से विमुख रहने से अन्तारात्मा हमें बराबर कोसती रहती है।
२०२. ईश्वर और धर्म की मान्यतायें केवल इसलिए हैं कि इन आस्थाओं का हृदयंगम करने वाला व्यक्ति निजी जीवन में सदाचारी और सामाजिक जीवन में परमार्थी बने।
२०३. त्याग और बलिदान ही किसी व्यक्ति के प्रबुद्ध जागृत, आदर्शवादी, ईश्वर भक्त एवं धर्मात्मा होने का चिन्ह है।
२०४. मन को वश में करने का अर्थ है आकांक्षाओं को भौतिक प्रवृत्तियों से मोड़कर आत्मिक उद्देश्यों में नियोजित करना।
२०५. आत्मबल सम्पन्न होने का अर्थ है - आदर्शवाद के लिये बड़े से बड़ा त्याग कर सकने का शौर्य।
२०६. मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है।
२०७. ईश्वर भक्ति का अर्थ है-आदर्शों के प्रति असीम प्यार।
२०८. एक बार ईश्वर भले ही किये गये दुष्कर्मों को क्षमा कर दे, परन्तु मनुष्य की आत्म चेतना उसे कभी क्षमा नहीं करती।
२०९. हमें श्रद्धावान तो बनाना चाहिए, पर अंध श्रद्धा और अंध भक्ति से सदैव बचना चाहिए।
२१०. मानसिक दुर्बलता का कारण व्यक्ति द्वारा स्वयं ही भले-बुरे कर्मों से आमंत्रित की गई आत्म-प्रताड़ना है।
२११. बड़प्पन और महानता केवल सादगी तथा शालीनता अपनाने से ही प्राप्त होती है।
२१२. शरीर से भी अधिक शक्तिशाली और सामर्थ्यवान है मनोबल।
२१३. पाप को कोई पचा नहीं सकता है। देर सबेर में उसका भेद खुलता ही है।
२१४. लालच, दुर्व्यसन और व्यामोह से दुष्प्रवृत्तियाँ पनपने की सुनिश्चित संभावना है।
२१५. वास्तविकता की परख तो कठिन अवसरों पर होती है कि किसमें कितना धैर्य एवं सूझबूझ है।
२१६. कठिनाइयाँ बरदान बनती हैं या अभिशाप यह इस बात पर निर्भर करता है कि मनुष्य उनका स्वागत करता है आथवा उनसे घबड़ा कर भागता है।
२१७. कठिनाइयाँ एक खराद की तरह हैं जो मनुष्य के व्यक्तित्व को तराशकर चमका दिया करती हैं।
२१८. कष्ट और कठिनाइयाँ मनुष्य के अहंकार को नष्ट करके उनमें विम्रता तथा श्रद्धा भक्ति भर देती हैं।
२१९. मनोविकार बाहर के शस्त्रधारी शत्रुओं की अपेक्षा हजार गुना अधिक बलिष्ठ और घातक होते हैं।
२२०. कुविचार सर्पदंश की तरह है, वे ही अपना विस्तार करके दोष दुर्गुणों के रूप में फैल जाते हैं।
२२१. आलस्य और अनियमितता का अवरोध करते कोई व्यक्ति किसी प्रयोजन में सफल नहीं हो सकता।
२२२. कुविचार विषाणुओं से अधिक घातक और घुन से अधिक बलिष्ठ, अदृश्य होते हैं।

२२३. आदर्श रहित और लक्ष्य विहीन व्यक्ति जीवन की लाश ढोते रहते हैं।
२२४. विचार परिवर्तन के चार ही आधार हैं
- स्वाध्याय
 - सत्संग
 - मनन और
 - चिंतन
२२५. दूसरों के हित में तत्पर और समाज के सामूहिक कल्याण के लिये कर्तव्य भावना से प्रेरित मनुष्य ही वास्तव में मनुष्य हैं।
२२६. सेवा साधना से बढ़कर कोई ऐसा कर्म नहीं जो मानव को अपनी गरिमा का भान कराता है।
२२७. आपत्तियों का कारण आमतौर से मनुष्य के अब के या पिछले विभ्रम, दोष, दुर्गुण या कुकृत्य ही होते हैं।
२२८. जिसने अपने ऊपर संयम कर लिया वह इस त्रैलोक्य का स्वामी है।
२२९. ऐसा काम मत करो कि पीछे पछताना पड़े।
२३०. अव्यवस्थित और असंयत रहकर १०० वर्ष जीने के अपेक्षा ज्ञान एवं धर्मपूर्वक एक वर्ष जीवित रहना अच्छा है।
२३१. अपने सद्गुणों, सद्विचारों एवं सत्प्रयत्नों द्वारा कोई भी मनुष्य बुरी से बुरी परिस्थितियों को पार करके ऊँचा उठ सकता है।
२३२. नैतिक आदर्शों का पालन शरीर के प्रतिबंधों पर नहीं, मन की उच्च स्थिति पर निर्भर है।
२३३. भाग्य एवं ईश्वर का वरदान-अभिशाप भी मनुष्य के अपने विचारों एवं कार्यों के आधार पर ही प्राप्त होता है।
२३४. अव्यवस्थित मनोभूमि को लेकर इस संसार में न तो कोई महान बना है और न किसी ने अपने जीवन को सफल बनाया है।
२३५. यह गाँठ बाँध नेने योग्य बात है कि मनुष्य के जीवन में एकमात्र विभूति उसका मन है।
२३६. मन को स्वच्छ बनाना हमारे चेतन जगत का सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।
२३७. मन की मलिनता के रहते प्रत्येक दुःख और अशुभ मनुष्य के आगे पीछे ही घुमता रहेगा।
२३८. जिसने अपना अंतःकरण स्वच्छ कर लिया उसने इसी देह में देवत्व का लाभ उठाया है और इसी धरती पर स्वर्ग का आनंद लिया है।
२३९. सबमें दोष ढूँढना और उन्हें अपना शत्रु मानना ऐसा मानसिक दुर्गुण है, जिसके कारण अपने भी बीराने हो जाते हैं।
२४०. अपनी भीतरी मलीनताओं को खोजना और उन्हें सुधारने का प्रयत्न करना इस संसार का सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।
२४१. हमें स्मरण रखना चाहिए कि स्वयं अपराध न करना ही हमारी निर्दोषिता का प्रमाण नहीं है,

अपराधों और बुराइयों को रोकना भी प्रत्येक सभ्य और प्रबुद्ध नागरिक का कर्तव्य है।

२४२. मानसिक स्वच्छता के चार आधार हैं:-

-सत्य

-संतोष

-सवध्याय

-ईश्वर उपासना

२४३. छल, कपट, दंभ, पाखंड आदि कुविचारों का शमन सत्य निष्ठा से होता है।

२४४. दूसरों में अपनी ही आत्मा देखकर उनसे प्रेम, सहायोग एवं उदारता का व्यवहार करना अहिंसा है।

२४५. समाज की उपेक्षा करके एक व्यक्ति यदि अपनी ही भलाई की बात सोचता है तो यह उसकी संकीर्णता है।

२४६. परमार्थ वह है, जिससे संसार में सद्विचारों और सद्भावों की वृद्धि होती है तथा पिछड़े हुआओं को उठाने का अवसर मिलता है।

२४७. अनैतिकता, व्यक्तिगत स्वार्थपरता की दृष्टि से भी घातक है।

२४८. मन के हारे हुआओं को सफलता शायद ही कभी मिलती है।

२४९. जब हम किसी संकल्प को या अच्छे मनोभव को बिना किसी उपयोग के नष्ट हो जाने देते हैं तो उसका अर्थ होता है कि हमने सौभाग्य गँवा दिया।

२५०. विपत्ति सहने के लिये शरीर की नहीं आत्मा की शक्ति होना चाहिए।

२५१. परमार्थ के कार्य में न समय बाधक है, न ही साधनों का अभाव, कमी होती है तो केवल संकल्पों की।

२५२. जिनमें कुछ कर गुजरने की भावना होती है, मार्ग में हजार बाधाएँ आने पर भी उनके क्रियाकलाप नहीं रुकते।

२५३. हमें मरना है - यह ध्यान देने की बात नहीं। सत्यता से अपनी यात्रा की लीला को चलाते हुए काम किये जाओ।

२५४. आदर्शवादी व्यवहार को धर्म कहते हैं और उत्कृष्ट परिष्कृत चिंतन को अध्यात्म।

२५५. सतत् पुरुषार्थ का स्थान न मेधा ले सकती है, न प्रतिभा, न शिक्षा।

२५६. उनकी प्रशंसा करें जो धर्म पर दृढ़ हैं। उनके गुणगान न करो जिनने अनीति से सफलता प्राप्त की।

२५७. आत्म विश्वासी कभी हरता नहीं, कभी थकता नहीं, कभी गिरता नहीं और कभी मरता नहीं।

२५८. मानवीय महत्ता का मूल स्रोत उसकी विचारशीलता ही है।

२५९. किन्हीं परिस्थितिवश सफलता न भी मिले, तो अपने सद्देश्य-लक्ष्य के लिये मर मिटना या असफल होना भी श्रेयस्कर है।

२६०. जब तुम गलती करे, तो उसे बहुत देर तक मत देखो।

२६१. भूल सुधार संसार की सबसे बड़ी सेवा है।

२६२. जीवात्मा अमर है। नष्ट होने वाला तो शरीर है। इसलिए अमरत्व पाना है तो शरीर नहीं, आत्मा की

उपासना करो।

२६३. प्रत्युपकार के लिये किया गया उपकार तो खीझ और निराशा ही दे सकता है।
२६४. उज्ज्वल मन और उन्नत आत्मा की चमक मनुष्य के व्यक्तित्व में अवश्य परिलक्षित होती है।
२६५. जिसने परोपकार तथा परमार्थ को अपना ध्येय बना लिया होता है वह अकेला रहने पर भी एकाकी नहीं रहता।
२६६. जो बीत चुका उसे भूल जाओ। वह लौट नहीं सकता। भविष्य की बात सोचो और उसे मूर्तिमान करने के कये आज ही सरंजाम जुटाओ।
२६७. मनुष्य की सच्चाई का एकमात्र निर्णयात्मक प्रमाण यह है कि अपने सिद्धांत के लिये वह अपना सब कुछ स्वाहा कर देने को तैयार रहे।
२६९. चुपचाप पड़े रहने का नाम शान्ति नहीं है। चाहे कैसी भी स्थिति हो धैर्य रखकर अनिवार्य दुःखों को स्वयं वीरतापूर्वक झेलताहुआ भी अद्विग्न नह हो उसे शान्ति कहते हैं।
२७०. संसार का संचालन करने के लिये हम बाँधे हुए नहीं हैं, लेकिन ईश्वर ने हमारे लिये जो काम बताया है, उसे अपनी सारी शक्ति लगाकर पूरा करने के लिये हम बँधे हुए हैं।
२७१. जीवन का सबसे बड़ा पुरस्कार-जीवन की सबसे बड़ी दौलत, समय है।
२७२. क्या तुम्हें अपने जीवन से प्रेम है ? वब समय को व्यर्थ नष्ट मत करें, क्योंकि जीवन उसी से बना है।
२७३. एक इच्छा, एक निष्ठा और शक्तियों की एकता मनुष्य को उसके अभीष्ट लक्ष्य तक अवश्य पहुँचा देती है।
२७४. तन को दुःखाना और उसको अद्विग्न करना तप नहीं, मन को पवित्र और निर्मल करना ही तप है।
२७५. जब तक हमारे भीतर अहंकार का कुछ भी अंश रहेगा, आत्म समर्पण संभव नहीं हो सकेगा।
२७६. सत्य का साक्षात्कार करना चाहिए और स्मरण रखना चाहिए कि तुम सबको ऋषि होना है।
२७७. सद्बुद्धि ही संसार में सर्वश्रेष्ठ वस्तु है।
२७८. अपनी निन्दा या दूसरों की त्रुटियाँ सुनने में समय नष्ट न करो।
२७९. चिन्ता में खून सुखाने की अपेक्षा कठिनाई का हल सोचना श्रेष्ठ है।
२८०. हीनता की भावना, रोग की कल्पना, पराजय की विचारधारा, नैराश्य और शंका का परित्याग कीजिए।
२८१. तुम जो चाहो वही अपने को बना सकते हो।
२८२. जिसे क्रोध आता है, उसका सर्वनाश होकर रहता है।
२८३. जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रेम और बलिदान को प्रधान समझना चाहिए।
२८४. अपने जीवन में बुद्धिमानी की कोई बात है तो वह एकाग्रता है।
२८५. अपने जीवन की कोई खराब बात है तो वह है, अपनी शक्तियों को बखेर देना।
२८६. अपने दोषों से सावधान रहो, क्योंकि यही ऐसे दुश्मन हैं जो छिपकर वार करते हैं।
२८७. तुम्हारे लिये न तो धन की आवश्यकता है, न प्रसिद्धि की और न कीर्ति की, तुम्हें केवल महानता

की जरूरत है।

२८८. आत्म विस्मृति का लांछन ऐसा है, जिसके रहते मनुष्यों को नरपशु, वनमानुष आदि के नाम से ही जाना जा सकता है।
२८९. सम्मान केवल परमार्थी, सदाचारी लोगों के लिये सुरक्षित रहना चाहिए।
२९०. जिस समाज का वतावरण दूषित तत्वों से भरा होता है, उसकी अगली पीढ़ियाँ क्रमशः अधिक दुर्बल एवं पतित बनती चली जाती हैं।
२९१. सामूहिक सुख शांति का मुख्य आधार है कि व्यक्ति और समाज के सुधार का प्रयत्न साथ-साथ किया जाय।
२९२. हंसी-खुशी तो उसी की स्थायी और सुरक्षित रह पाती है, जो अपने साथ दूसरों को भी उसमें भागीदार बनाकर मंगल मनाया करता है।
२९३. व्यक्तिगत विचार संकीर्णता की द्योतक है और संकीर्ण व्यक्ति संसार में कभी उन्नति नहीं कर सकता।
२९४. मनुष्य के सद्गुणों को सही दिशा में प्रोत्साहित करके उसकी प्रगति का मार्ग खोलने के लिये उदार होना स्वयं के विकास के लिये ही प्रयत्न करना है।
२९५. सबसे अलग रहकर अपनी ही बात सोचते रहना आध्यात्मिक आदर्श नहीं, इसे एक प्रकार की जड़ता, कहा जा सकता है।
२९६. स्वार्थपरता की मनोवृत्ति मनुष्य को आंतरिक दृष्टि से भी दीन-हीन, एकाकी बना देती है।
२९७. हम केवल अकेले व्यक्ति नहीं हैं। हमारा अस्तित्व सामाजिक है।
२९८. जितने देर तक हम अपने आपको एक लगल इकाई मानकर अपनी उन्नति और विकास के लिये सोचते और कार्य करते रहेंगे हमें निराश ही रहना पड़ेगा।
२९९. सच्च अध्यात्म है- अपने सारे गुणों, सारी उपलब्धियों और सारी संपदाओं को सामाजिक हित पर न्यौछावर कर देना।
३००. समाज से आँखें मूँदकर अपनेपन की भावना रखकर सार्थपरता होना सभी तरह से हेय, निषिद्ध और सामाजिक अपराध माना गया है।
३०१. समाज में हो रही बुराइयों को रोकने के लिये ईश्वर ने सामूहिक जिम्मेदारी हर व्यक्ति को सौंपी है।
३०२. जिस प्रकार व्यक्ति के सत्कर्मों का लाभ सारे समाज को मिलता है, वैसे ही उसके दुष्कर्मों का परिणाम भी दूसरोंको भूगतना पड़ता है।
३०३. अपने दोषों को हटाने का प्रयत्न न करना, उनकी ओर उपेक्षा की दृष्टि रखना एक पाप है।
३०४. जिन्होंने शरीर क्रिया का त्याग किया और मन से विषयों का चिंतन करते हैं ऐसे लोग पथ भ्रष्ट हो जाते हैं।
३०५. जो उदारतापूर्वक सबके हित की बात सोचता है वही मनुष्य श्रेय का अधिकारी हो सकता है।
३०६. ईश्वर का आदेश प्रतिक्षण यह बताती है कि उठो, मुझ जैसा पूर्ण और परिपक्व बनों संकीर्णताओं

में अमूल्य क्षणों को नष्ट न होने दो।

३०७. परोपकार वह है जो निःस्वार्थभाव से किया जाय।
३०८. स्वार्थ की दृष्टि से जो सेवा की जाती है, वह परोपकार नहीं प्रवंचना है।
३०९. जो व्यक्ति प्रत्यक्ष में किसी की सेवा न करते हुये अपने नियमित कर्म, कर्तव्य को ईमानदारी, सचाई नेकनियति से करते हैं, वे भी समाज की एक सेवा ही करते हैं।
३१०. हर विचारशील व्यक्ति का कर्तव्य है कि वे समाज के विकास में अपने ज्ञान का जितना अंशदान कर सकते हों, अवश्य करना चाहिए।
३११. सच्चे अर्थों में परमार्थ वही है, जिसका प्रतिमूल्य नहीं लिया जाता।
३१२. परमार्थ की अभिव्यक्ति वाणी से नहीं व्यवहार से ही सिद्ध होती है।
३१३. इच्छा और कामनाओं का त्याग, अहंकार, स्पृहा, मोह आदि मनोभावों का त्याग सच्चा त्याग है।
३१४. वह समाज जीवित नहीं रह सकता, जिसके सदस्यों के बीच परस्पर सेवा, सहयोग के आधार-परमार्थ की भावना न हो।
३१५. धनी लोग अपने धन के द्वारा सुख भोगें इसमें हर्ज नहीं, पर उन्हें इसी कारण सम्मान मिले कि वे धनी है तो यह अनुचित है।
३१६. धन कमाने, पद प्राप्त करने या चातुर्य दिखाने में कोई व्यक्ति सफल हो जाय तो भी यदि वह भावना और कर्तव्य की दृष्टि से गिरा हुआ है तो उसे सामाजिक दृष्टि से अवांछनीय व्यक्ति ही माना जायेगा।
३१७. मनुष्य का मूल्यांकन उसकी प्रत्यक्ष सफलता से नहीं, उसके उन्नत गुण, कर्म, और स्वभाव से करना चाहिए।
३१८. सफलता का मापदण्ड विजय, पराजय अथवा धन दौलत नहीं, बल्कि वे कर्तव्य हैं जिनका किसी ने आपत्ति तथा हानि की स्थिति में भी निष्ठापूर्वक पालन किया है।
३१९. हमारा समर्थन उचित तथा अच्छि बातों को ही प्राप्त होना चाहिए।
३२०. हम ऊपरी आडम्बर देखकर किसी गलत व्यक्ति को आदर, दूष्प्रवृत्तियों को प्रात्साहित करने के दोषी न बनें।
३२१. जिस समाज में मनुष्य की महत्ता का मूल्यांकन धन के आधार पर होता है, वह कभी उच्च स्तरीय प्रगति कर सकने में समर्थ नहीं हो सकता।
३२२. ईश्वर भक्ति या गुरु भक्ति में पाने का नहीं देने का तत्त्वज्ञान सन्निहित है।
३२३. इस युग का सबसे से बड़ा और सबसे अंतिम युद्ध हमारा ही होगा, जिसमें भारत एक देश न होगा महाभारत बनेगा और उसका दार्शनिक साम्राज्य विश्व के कोने कोने में पहुँचेगा।
३२४. गुरु के प्रति, माताजी के प्रति श्रद्धा तो ठीक है, वास्तव में सिद्धन्तों के प्रति श्रद्धा होती है, आदर्शों के प्रति श्रद्धा होती है।
३२५. सेवा जिस जीवन में न हो उसका भजन कैसा ? जो भजन न करता हो वह भक्त कैसा ?
३२६. केवल वाणी को चुप करना ही नहीं, इंद्रियों को अपने विषयों से चुप कराने का नाम मौन है।

३२७. मन का मौन तो तभी होगा जब सुक्ष्म शरीर से होने वाले विषय विकारों की भी मनुष्य बड़ी दृढ़ता के साथ रोकने का हर संभव प्रयत्न करें।
३२८. विद्या तपस्वी को प्राप्त होती है, जो शौक, मोज, आलस्य और प्रमाद को जित लेता है।
३२९. आदर्शों के लिये जीवित रहने का जिन्होंने व्रत धरण कर लिया, उन्हें जीवन्मुक्त ही कहना चाहिए
३३०. उत्कृष्ट चिंतन, स्वयं ही स्वर्ग बना अंतःकरण में क्रीड़ा कल्लोल के अनुरूप चलता है, तो समझना चाहिए, ईश्वर का तादात्म्य हो गया।
३३१. जिन्हें स्वार्थ नहीं परमार्थ प्रिय है, उन्हें मनुष्य कलेवर में विचरण करने वाले मूर्तिमान देवता ही कहना चाहिए।
३३२. जो निर्वाह भर की आजीविका से संतुष्ट रहकर शेष सारी क्षमता अपनी उदात्त भावनाओं को चरितार्थ करने में, आत्म निर्माण और विश्व निर्माण में नियोजित रखे, वह ब्राह्मण है।
३३३. उदात्त भावनायें मनुष्य के लिये भगवान का सबसे बड़ा वरदान है।
३३४. नर को नारायण बना देने की क्षमता, अंतःकरण के विकसित भाव से ही होती है।
३३५. इस संसार का सबसे बड़ा आनंद जिसे उल्लास कहते हैं, उच्च भावनाओं पर ही अवलंबित है।
३३६. प्रेम जिसे परमेश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति भी कहा जा सकता है, केवल भावनाशील अंतःकरण में ही उद्भूत होता है।
३३७. पशु जीवन से ऊंचे उठकर मानवीय गरिमा को प्राप्त कर सकना और उससे भी एक कदम आगे बढ़कर देवत्व का वरण करना उच्च भावनाओं के अवलंबन से ही संभव है।
३३८. सचाई और भलाई का मार्ग सबके लिये सीधा और सरल है।
३३९. पाप करके उसे छिपाये रहने में इतनी अधिक मानसिक शक्ति खर्च होती है, जितनी कि सदुपयोग करके मनुष्य उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँच सकता है।
३४०. दूसरों की श्रद्धा, मन का संतोष और आत्मा का अशीर्वाद पाकर ईमानदार व्यक्ति सच्ची शक्ति प्राप्त करता है।
३४१. यदि हमें सचमुच ही शांति और प्रगति अभीष्ट हो तो इसके लिये सदाचार के प्रति अगाध निष्ठा ही उत्पन्न करनी पड़ेगी।
३४२. दूसरों को सुधारने से पहले हमें अपने सुधार की बात सोचनी चाहिए।
३४३. हम सुधरें, हमारा दृष्टिकोण सुधरे तो दूसरों का सुधार होना कुछ भी कठिन न रह जायगा।
३४४. अगर प्रत्येक स्थान में प्रत्येक परिस्थिति में हम विजय प्राप्त करने का भरोसा न रखें तो हम अपने को मनुष्य कहने के अधिकारी नहीं हैं।
३४५. प्रत्येक ऊँची सफलता के लिये पहले मजबूत, दृढ़ आत्मा-श्रद्धा का होना अनिवार्य है।
३४६. आधे मन से किया हुआ कार्य कभी भी सिद्ध नहीं हो सकता।
३४७. तुम्हारी श्रद्धा के अनुरूप ही तुमको सफलता प्राप्त होगी।
३४८. श्रद्धा हमारे भीतर रहने वाला एक ऋषि अथवा संदेशवाहक है।

३४९. परमात्मा के विधान में अन्याय अथवा पक्षपात की कोई गुंजाइश नहीं है।
३५०. उन्नति के मार्ग किसी के लिये प्रतिबंध नहीं है वे सबके लिए समान रूप से खुले हैं।
३५१. आकांक्षाओं का वेग और उनकी पूर्ति न होना यह भी एक अजीब दंड है, जिसे भोगते हुये बावेर व्यक्ति जिंदगी पूरी करने पर विवश होते हैं।
३५२. कामना अथवा स्पृहा कर लेना जितना सरल है, उससे कहीं अधिक श्रमसाध्य है, उनको मूर्तिमान करना।
३५३. एकनिष्ठ साधना से रहित व्यक्ति किसी पुरस्कार का अधिकारी नहीं होता।
३५४. ईश्वरीय प्रसाद तथा पुरस्कार न तो किसी के लिये सुरक्षित है और न वर्जित।
३५५. हम आप सबके लिये संसार में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, जिसको अपने में उसकी पात्रता प्राप्त कर कभी भी पा सकते हैं।
३५६. त्याग के बिना मिलने का कोई नियम ही इस संसार में नहीं है।
३५७. उदारता में हानि और कृपणता में लाभ जिन्हें दीखती है, वह वस्तुतः भ्रम में है।
३५८. आत्मीयता को छोटी सीमा में कैद न करें वरन् उन्मुक्त आकाश में उसे स्वच्छन्द विचरण करने का अवसर दे।
३५९. आप लीजिये-मुझे नहीं चाहिये, यह नीति है जिसके आधार पर सुख और शांति का होना संभव है।
३५०. मैं लुंगा, आपको न दूंगा, की नीति व्यक्ति को नितान्त स्वार्थी और नरकगामी बना देता है।
३५१. अपने में देने की शक्ति रखिये, देते चलिये क्योंकि देकर ही फल प्राप्त कर सकेंगे।
३५२. आप किसी को कुछ दें, उसका किसी प्रकार का उपकार करें तो बदले में किसी प्रकार की आशा न रखें।
३५३. हमें सदैव परोपकार में रत रहना चाहिए किन्तु यह अभिमान-दम्भ या कीर्ति के लिये नहीं, आत्म कल्याण के लिये होना चाहिए।
३५४. दूसरों का उपकार करना मानों एक प्रकार से अपना ही कल्याण करना है।
३५५. जब आप किसी को भौतिक पदार्थ देने में असमर्थ हों तो भी अपनी सद्भावनायें और शुभकामनाएँ दूसरों को देते रहिये।
३५६. 'जीवन' का अर्थ है 'समय' जो जीवन से प्यार करते हों वे आलस्य में समय नष्ट न करें।